श्रीसीतारामाभ्यां नमः
प्रस्थानत्रयानन्दभाष्यकाराय नमोनमः

## वशिष्ठसंहितास्थः

# श्रीसीतारामाभेदः

### जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य रामेश्वरानन्दाचार्य प्रणीत – प्रकाश

**सीताकान्तसमारम्भां रामानन्दार्यमध्यमाम् ।**
**रामप्रपन्न गुर्वन्तां वन्दे गुरुपरम्पराम् ॥**

साधकों को सायुज्यमुक्ति रूप स्वजीवन लक्ष्य को प्राप्त करने के लिये सदाचार्य से सविधि मन्त्रराज श्रीराममहामन्त्र को प्राप्त करना जितना आवश्यक है उतना ही आवश्यक उसकी परम्परा जानना भी है इसलिए अपने पितामह के मानस पुत्र ब्रह्मर्षि श्रीवशिष्ठजी से षडक्षर मन्त्रराज प्राप्त करने के बाद भी पराशरजी गुरुदेव वशिष्ठजी से अपनी - श्रीतारक मन्त्रराज की परम्परा जानने के लिए प्रार्थना करते हैं ।

यह श्रीसम्प्रदाय सर्वेश्वर श्रीरामजी से प्रारम्भ होता है जिसका वर्णन **श्री मैथिली महोपनिषद्** निम्नरूप से करती है -

***इममेवमनुं पूर्वं साकेतपतिर्मामवोचत् । अहं हनूमते मम प्रियाय प्रियतराय । स वेदवेदिने ब्रह्मणे । स वशिष्ठाय । स पराशराय । स व्यासाय । स शुकाय ।***

अर्थात् सर्वेश्वरी श्रीसीताजी ऋषीश्वरों को मन्त्रराज षडक्षर महामन्त्र के परम्परा के विषय में कहती हैं - इसी (***रां रामाय नमः***) षडक्षर श्रीराम महामन्त्र को दिव्य लोक में श्रीसाकेताधिनायक सर्वेश्वर श्रीरामचन्द्रजी ने मुझे कहा अर्थात सविधि उपदेश दिया, मैंने मेरे प्रियातिप्रिय सेवक मरुतनन्दन श्रीहनुमानजी को यथाशास्त्र विधि विधान से उपदेश दिया, श्रीहनुमानजी ने भी शास्त्र विधि विधान के अनुसार वेद के ज्ञाता श्रीब्रह्माजी को उपदेश दिया श्रीब्रह्माजी ने भी शास्त्रविधान के अनुसार ही मानस पुत्र श्रीवशिष्ठजी को उपदेश दिया, श्रीवशिष्ठजी ने शास्त्रीय विधि से श्रीपराशरजी को उपदेश दिया, श्रीपराशरजी ने शास्त्रीय विधानानुसार श्रीव्यासजी को उपदेश दिया, तथा श्रीव्यासजी ने भी शास्त्रानुसार ही श्रीशुकदेवजी को उपदेश दिया, इसी रहस्यमय श्रीसम्प्रदाय की परम्परा की जिज्ञासा को व्यक्त करते हुए स्वगुरुदेव से सानुनय प्रार्थना करते हैं –

**वशिष्ठं ब्रह्मरामज्ञमुपगम्य पराशरः ।**
**प्रणम्य दण्डवत् प्राह दयासिन्धो ! जगद्गुरो ! ॥ १ ॥**

श्रीसम्प्रदाय के छठे आचार्य श्रीपराशरजी श्रीसम्प्रदाय के पांचवें आचार्य परब्रह्म श्रीरामजी के स्वरूप को यथार्थ रूप से जानने वाले श्रीवशिष्ठजी के पास जाकर बोले हे जगद्गुरु ! हे दयासिन्धु ! इस प्रकार कहते हुये दण्डवत् प्रणाम करके हाथ जोडकर विनीत रूप से कहने - निवेदन करने लगे ॥ १ ॥

**कृपां कृत्वा यथा देव ! दत्तो मे तारकस्त्वया ।**
**तथा ऽनुगृह्य मां ब्रूहि मन्त्रराजपरम्पराम् ॥ २ ॥**
**श्रृणु वदामि ते वत्स ! मन्त्रराजपरम्पराम् ।**
**यस्याश्च वन्दनाद् रामश्चात्यन्तं हि प्रसीदति ॥ ३ ॥**

हे देव ! हे सर्व समर्थ श्रीगुरुदेव ! जैसे आपने मुझ पर कृपा करके तारक मन्त्रराज षडक्षर का उपदेश दिया तथैव इस आप के सेवक पर अनुग्रह करके मन्त्रराज षडक्षर श्रीराम महामन्त्र की परम्परा का भी उपदेश करें ताकि उस परम्परा का अनुसन्धान कर श्रेयोभागी बनूं ॥ २ ॥

पूर्वोक्त प्रकार से श्रीपराशरजी के प्रार्थना करने पर श्रीवशिष्ठजी ने कहा वत्स ! हे प्रिय शिष्य पराशर ! श्रीमन्त्रराज की परम्परा तुम्हें कहता हूं उसे सावधान होकर सुनो जिस परम्परा का स्मरण कर प्रेम पूर्वक पूर्वाचार्यों की बन्दना करने से श्रीमन्त्रराज के अधिष्ठाता सर्वेश्वर श्रीरामजी अत्यन्त प्रसन्न होते हैं ॥ ३ ॥

**सृष्टयादौ च सिसृक्षुः श्रीरामोविधिंविधाय हि ।**
**सृष्टये प्रेषयामास वेदं ज्ञानमहानिधिम् ॥ ४ ॥**
**तथाऽप्यर्थावबोधस्याभावाद् विधिः ससर्ज न ।**
**जातायामीशभक्तौ च गुरुभक्तिर्यतो नहि ॥ ५ ॥**

हे पराशर ! श्रीमन्त्रराज जिसका कि मैंने तुम्हे उपदेश दिया है इस परम्परा के प्रारम्भ की एक दिव्य घटना है उसे सुनो वह इस प्रकार है - सृष्टि के आदि काल में सृष्टि की इच्छा से श्रीरामजी ने ***'एकोऽहं बहुस्याम'*** इस वेद वचनानुसार अपने सत् संकल्प से विधि - ब्रह्माजी की सृष्टि की ***'यो ब्रह्माणं विदधाति पूर्वं यो वै वैदांश्च प्रहिणोति तस्मै'*** इस वेद वचनानुसार ब्रह्माजी की सृष्टि कर उन्हें वेद

पढाया अनन्तर उन्होंने ज्ञान के महानिधि ब्रह्माजी को विस्तृत सृष्टि करने के लिये कहा, अर्थात् आज्ञा दी कि सृष्टि के क्रम का विस्तार करो ॥ ४ ॥

भगवान् श्रीरामचन्द्रजी से सृष्टि करने की आज्ञा प्राप्त हो जाने पर ब्रह्माजी ने सृष्टि के लिये प्रयत्न किया पर वेद के अर्थो का बोध न होने के कारण ब्रह्माजी सृष्टि नहीं कर सके। उसका कारण यह था कि उनमें ईश्वर श्रीराम विषयक भक्ति हो जाने पर भी अभी तक श्रीरामजी में गुरु विषयक भक्ति उत्पन्न नहीं हुई थी ॥ ५ ॥

**भक्तिद्वये यतश्चास्ति तत्त्वप्रकाशहेतुना।**
**ततो वेदार्थबोधो न गुरोर्भक्तेरभावतः ॥ ६ ॥**
**ततो रामस्य खेदं हि समुद्वीक्ष्य च मैथिली ।**
**गृहीत्वा विधिवद् रामान्मन्त्रराजं षडक्षरम् ॥ ७ ॥**

पराशर ! तत्त्व ज्ञान अर्थात् वास्तविक वेद ज्ञान प्राप्ति में कारण केवल ईश्वर ज्ञान ही नहीं उनमें गुरु भक्ति तथा ईश भक्ति दोनों ही कारण हैं इसलिये ब्रह्माजी में गुरु भक्ति के अभाव होने से वेदार्थ का वास्तविक बोध नहीं हुआ, तत्त्व ज्ञान के अभाव में वे सृष्टि न कर सके स्तम्भित हो कर रह गये ॥ ६ ॥

सृष्टि कार्य में असमर्थ होकर विमोहित ब्रह्माजी को देखकर रामचन्द्रजी भी दुःखित हुये, अपने प्राणेश्वर को दुख में देखकर तथा समस्या को समझकर श्रीमैथिलीजी ने सर्वेश्वर श्रीरामजी से शास्त्र विधि के अनुसार मन्त्रराज षडक्षर श्रीराम महामन्त्र को ग्रहण कर के अन्यों को इस श्रीमन्त्रराज का उपदेश देने की आज्ञा भी प्राप्त करली ॥ ७ ॥

**हनुमते च दत्त्वा तं राममन्त्रं षडक्षरम् ।**
**विधये मन्त्रदानाय प्रेरयामास मारुतिम् ॥ ८॥**

**श्रीहनुमानुवाच**

**न दत्त्वा स्वीयमन्त्रं त्वमन्यमन्त्रमदाः कथम् ! ।**

**श्रीमैथिल्युवाच**

**एवं पृष्टाऽऽञ्जनेयेनावदत् सा श्रृणु मारुते ! ॥ ६॥**

**प्राणादप्यधिको मह्यं प्रेयान् रामो वराननः ।**
**यथा रामस्तथाऽहं च भेदः कश्चिन्न चावयोः ॥ १०॥**

सर्वेश्वरी श्रीसीताजी की आज्ञानुसार श्रीहनुमानजी ने शास्त्रविधि के अनुसार श्रीब्रह्माजी को श्रीराममहामन्त्र की दीक्षा दी और श्रीगुरुमहत्व का उपदेश दिया अनन्तर श्रीसीताजी की वन्दना पूर्वक श्रीहनुमान जी ने कहा माताजी ! मेरे मन में एक शंका है उसका आप निवारण कर दीजिए ! वह यह कि आपने अपने महामन्त्र की दीक्षा - शिक्षा मुझे न दे कर अन्य - श्रीराममहामन्त्र की दीक्षा क्यों दी ! तथा इसी की दीक्षा ब्रह्माजी को देकर इसके विशद प्रचार - प्रसार करने की आज्ञा क्यों दी !

पूर्वोक्त प्रकार से विनीत भाव से श्रीअञ्जनीनन्दनजी से प्रार्थना की गई तदनन्तर श्रीमैथिलीजी ने कहा वत्स ! हे मरुतनन्दन ! जिस विषय में तुम ने आशंका की है उसका रहस्य सावधानतया सुनो ॥ ६॥

अञ्जनीनन्दन ! अत्यन्त सुन्दर मुखाकृति वाले विश्वमोहक श्रीरामजी मुझे मेरे प्राण से भी अधिक प्रिय हैं, *अतः जैसे श्रीरामजी हैं वैसे ही मैं भी हू, हम दोनों में थोड़ा सा भी भेद नहीं है* ॥ १० ॥

**शीततांहि यथा नीरे तथाहं राघवे स्थिता ।**
**गन्धवत्वं यथा भूम्यां स्थितो रामस्तथा मयि ॥ ११ ॥**
**इच्छाम्यहं न किञ्चिद्धि कर्त्तुं रामेच्छया विना ।**
**मां विना न च रामोपि किञ्चित् कर्त्तुं समीहते ॥ १२ ॥**

हे मरुतनन्दन ! जैसे पानी में शीतलता अभिन्न रूप से रहती है उसी प्रकार से मैं श्रीराघवजी में स्थित हूं। जैसे भूमि में गन्ध सदा अभिन्न रूप से रहता है उसी प्रकार से श्रीरामजी भी मुझ में सदा अभिन्न रूप से स्थित हैं ॥ ११ ॥

वत्स ! मैं श्रीरामजी की इच्छा के बिना कुछ भी करने की इच्छा नहीं रखती अर्थात् श्रीरामाज्ञा के बिना मैं कुछ भी नहीं करती तथैव मेरे बिना श्रीरामचन्द्रजी भी कुछ करने की इच्छा नहीं रखते हैं ॥ १२ ॥

**सर्वेश्वरी यथा चाहं रामः सर्वेश्वरस्तथा ।**
**षड्गुणो भगवान् रामः षड्गुणाहं स्वभावतः ॥ १३ ॥**
**सर्वस्याधारभूतौ च त्वावामेव हि मारुते ! ।**
**स्वे महिम्नि स्थितावावामन्याधारोन चावयोः ॥ १४ ॥**

हे हनुमान ! जैसे भगवान् श्रीरामजी सर्वेश्वर अर्थात् सभी के ईश्वर - आराध्यदेव तथा शासक हैं वैसे ही मैं भी सर्वेश्वरी अर्थात् सभी की आराध्या और शासिका हूं, तथा भगवान् श्रीरामचन्द्रजी ज्ञान शक्ति बल ऐश्वर्य वीर्य तथा तेज प्रभृति

छहों ऐश्वर्यादि गुणों से सदा सम्पन्न रहते हैं तो मैं भी स्वभाव से अर्थात् सत्य रुप से षड्गुणादि सम्पन्ना हूं ॥ १३ ॥

हे मरुतनन्दन ! चराचर सम्पूर्ण विश्व का आधार भूत प्रधान तत्त्व हम दोनों ही हैं अर्थात् सर्वविश्व हम दोनों में ही स्थिर है और हम दोनों अपनी ही महिमा अर्थात् स्वसत्त्व में स्थित हैं हम दोनों का अन्य कोई आधार भूत तत्त्व नहीं हैं अर्थात् हम दोनों किसी में आधारित न होकर स्वतः अपनी सत्ता में ही स्थित हैं ॥ १४ ॥

**सच्चिदानन्दरूपश्च माद्दशो राघवोपि हि ।**
**माद्दशो राघवश्चापि सर्वस्याराध्यतां गतः ॥ १५ ॥**
**सर्वफलप्रदौ चावां नित्यौ च सर्वशेषिणौ ।**
**नित्यलीला विभूत्योस्तच्चावां नाथौ श्रुतौ स्मृतौ ॥ १६ ॥**

आञ्जनेय ! जैसे मैं सत् चित् तथा आनन्द स्वरूप वाली हूं फिर भी राघवजी भी सत् चित् और आनन्द स्वरूप ही हैं जैसे मैं सभी की आराधनीया हूं वैसे ही श्रीरघुकुलनन्दन भी सभी के आराधनीय हैं ॥ १५ ॥

इसलिए हे हनुमान् जी ! हम दोनों ही उपासकों को उनके भावना के अनुसार सभी प्रकार के फलों को देने वाले हैं, नित्य हैं और सर्वशेषी भी हम दोनों ही हैं । तथा नित्य विभूति-परमदिव्य धाम श्रीसाकेत और लोलाविभूति-अवतार काल में भूलोकादि में भी नित्य अभिन्नतया रहने वाले उभय विभूति के नाथ - सर्वाधार भूत ईश्वर हम दोनों ही हैं ऐसा श्रुति और स्मृति आदि में विपुल वर्णन है ॥ १६ ॥

**दिव्यदेहगुणो रामो दिव्यदेहगुणा ह्यहम् ।**
**भक्त्या मुक्तिप्रदो रामो तथा चाहं मता बुधैः ॥ १७ ॥**
**पूज्यौ स्तुत्यौ तथाऽमोघौ कीर्तनीयौ समावथ ।**
**चिन्तनीयौ प्रणामार्हावावां दृश्यावभीष्टदौ ॥ १८ ॥**

वत्स ! श्रीरामजी दिव्य देह तथा अनन्त दिव्यगुण वाले हैं, और मैं भी दिव्य देह तथा अनन्त दिव्यगुण वाली हूं, सर्वेश्वर श्रीरामचन्द्रजी साधक जीवों को भक्ति से सायुज्य मुक्ति देने वाले हैं तो मैं भी भक्तिसम्पन्न साधकों को सायुज्य मुक्ति देनेवाली हूं ऐसा वेदादिशास्त्र तथा बुधजनों से प्रतिपादित है ॥ १७ ॥

श्रीमरुतनन्दन ! वेदादि सर्वशास्त्र निरूपित पूजनीय तथा स्तुति करने योग्य हम दोनों ही हैं, और समान भावना से कीर्तनीय भी हम दोनों ही हैं क्योंकि हम दोनों का दर्शन पूजा स्तुति और कीर्तन अमोघ-निश्चित रूप से फलप्रद है, तथैव चिन्तन-मनन-ध्यान करने योग्य प्रणाम करने योग्य और दर्शन करने योग्य भी हम दोनों ही हैं। इसका कारण यह था कि हम दोनों ही चिन्तन प्रणाम और दर्शन करने वालों को अभीष्ट - उन लोगों की इच्छाओं को पूर्ण करने वाले हैं ॥ १८ ॥

आवां तौ हि यतः कश्चिन्नाधिको न च यत्समः ।
सर्वात्मानौ मतौ चावां सर्वेषां प्रेरकौ तथा ॥ १६ ॥
सूक्ष्माचिच्चिद्द्वयेनावां विशिष्टौ प्रलये किल ।
सृष्टावावां विशिष्टौ तु स्थूलाचिच्चिद्द्वयेन हि ॥ २० ॥

श्रीरामप्रिय वत्स ! हम दोनों से अधिक अर्थात् विशिष्ट कोई नहीं है और न हम दोनों के समान ही कोई है क्योंकि हम दोनों सभी प्राणि वर्गों के आत्मा के रूप

में वेदादि शास्त्रों से निरूपित हैं और सभी के प्रेरक भी हम दोनों ही हैं ॥ १६ ॥

मारुति ! इस परिदृश्यमान सृष्टि के प्रलय काल में हम दोनों सूक्ष्म चित् नाम तथा रूप के विभाग में अयोग्य चित्-चेतन जीव वर्ग तथा अचित्-जड़ नाम रूप विभाग के अयोग्य प्रकृति वर्ग से नियत रूप से विशिष्ट युक्त-संश्लिष्ट रहते हैं, तथैव सृष्टि काल में हम दोनों ही स्थूल चित् अर्थात् नाम तथा रूप के विभाग में योग्य जीव वर्ग तथा स्थूल अचित् नाम रूप के विभाग में योग्य जड़ वर्ग से विशिष्ट ही रहते हैं उनसे रहित नहीं ॥ २० ॥

**सत्यकामौ तथा चावां सत्यसंकल्पतां गतौ ।**
**शरण्यौ वेदनीयौ च भजनीयौ हि मुक्तये ॥ २१ ॥**
**वेदवेद्यो जगद्योनिर्मन्निभो राघवो मतः ।**
**जगत्सृष्ट्यादयो लीला ममेव राघवस्य च ॥ २२ ॥**

श्रीहनुमान ! हम दोनों ही सत्यकाम हैं तथा सत्य संकल्प भी हैं, और शरण लेने योग्य शरण में आये सभी जनों को अभय देने वाले तथा जानने योग्य और मुक्ति के लिये भजनीय भी हम दोनों ही हैं अन्य कोई नहीं ॥ २१ ॥

जैसे मैं वेदों से जानने योग्य हूं तथा जगत् की योनी अर्थात् संसार को उत्पन्न करने वाली हूं वैसे ही श्रीराघवजी भी वेद् शास्त्रों से, वेद से प्रतिपाद्य और संसार को उत्पन्न करने वाले हैं ऐसा प्रतिपादित है। तथा जगत् की सृष्टि संरक्षण और संहार आदि लीलाएं मेरे समान ही श्रीराघवजी के भी हैं अतः दोनों में कोई अन्तर नहीं हम दोनों एक हैं ॥ २२ ॥

**मम लीलां विना रामलीला पूर्णा कदापि न ।**
**पूर्णा ममापि नो लीला श्रीरामलीलया विना ॥ २३ ॥**
**सर्वेषामवताराणामावावेवावतारिणौ ।**
**भासकभास्करादीनामावामेव विभासकौ ॥ २४ ॥**

रहस्य पिपासु हनुमन् ! मेरे लीला के बिना एकाकी श्रीरामजी की लीला कभी भी पूर्ण नहीं होती है तथा श्रीरामजी की लीला के बिना एकाकी मेरी लीला भी कभी पूर्ण नहीं होती है ॥ २३ ॥

पुत्र ! वेदशास्त्र प्रतिपादित जीतने भी अवतार-अंशावतार कलावतार आवेशावतार लीलावतार पूर्णावतार आदि सभी अवतारों के अवतारी हम दोनों ही हैं, अन्यत्र भी आगम शास्त्र यही कहता है - ***सर्वेषामवताराणामवतारीरघूत्तमः*** तथा दूसरों को प्रकाशित करने वाले सूर्य चन्द्र अग्नि आदि को विभासित अर्थात् प्रकाशित करने वाले - उनके अन्दर में रहकर प्रकाश और चेतना का संचार करने वाले हम दोनों ही हैं। वेद कहता है ***'यस्य भासा जगदिदं विभाति'*** ॥ २४ ॥

**त्रातुं धर्म च भक्तांश्चावतारो युगे युगे ।**
**आवयोर्नित्यसम्बन्धः शक्तिशक्तिमतोरिव ॥ २५ ॥**
**मया विना वदन् रामं रामं विना वदंश्च माम् ।**
**वदत्यावां यतश्चावामभिन्नावेव सम्मतौ ॥ २६ ॥**

हनुमन ! शरणापन्न भक्तों तथा सनातन वैदिक धर्म की दुष्टों से रक्षा के लिये हम दोनों का आवश्यकतानुसार प्रत्येक युग में हम दोनों का अवतार होता है,

शक्ति और शक्तिमान् के समान हम दोनों का नित्य सम्बन्ध है अर्थात् लीला विभूति तथा नित्य विभूति दोनों ही स्थलों में हम दोनों अभिन्नरूप से ही रहते हैं कभी अलग नहीं होते हैं ॥ २५ ॥

मारुति ! जो उपासक मेरे नामोच्चारण के बिना केवल श्रीरामनामोच्चारण कर आराधना करता है या श्रीरामनामोच्चारण के बिना मेरे नामोच्चारण कर उपासना करता है अर्थात् ***'श्रीराम'*** इस नाम मात्र का या ***'श्रीसीता'*** इस नाम मात्र का आराधन करता है वह आराधक हम दोनों के नामों का अर्थात् ***'श्रीसीताराम'*** इसका ही उच्चारण या आराधन करता है क्योंकि हम दोनों श्रीसीताराम अभिन्न हैं किसी भी रूप में अलग नहीं होते हैं श्रीमद्रामायण में श्रीसीताजी कहती हैं ***'अनन्या राघवेणाहं भास्करेण यथा प्रभा'*** श्रीरामजी भी कहते हैं 'अनन्या च मया सीता भास्करेण प्रभा यथा' अतः तत्त्वतः दोनों एक हैं ॥ २६ ॥

**कुरुते नावतिप्रीतौ तथाप्युभौ वदन्नरः ।**
**द्विगुणं कीर्तनं यस्माज्जायते च तथावयोः ॥ २७ ॥**
**सर्वशक्तिस्वरुपाहं सर्वशक्तिर्हि राघवः ।**
**वर्णिता शास्त्रतत्त्वज्ञैरावयोः सर्वरूपता ॥ २८ ॥**

हे हनुमान् जी ! हम दोनों में से किसी एक के नाम ग्रहण से दोनों का नाम ग्रहण हो जाता है तथापि उभय नाम - श्रीसीताराम का उच्चारण या उपासना करने वाला साधक हम दोंनों को अति प्रसन्न कर लेता है क्योंकि ***'श्रीसीताराम'*** इस प्रकार दोनों नामों का कीर्तन या उपासन करने से हम लोगों का द्विगुणित नामोच्चारण या उपासन हो जाता है ॥ २७ ॥

वत्स ! जैसे मैं सर्वशक्ति स्वरूपा हूं वैसे ही श्रीराघवजी सर्वशक्ति स्वरूप हैं ***'सीतारामौतन्मयावत्र पूज्यौ'*** इत्यादि वेदानुसन्धान से वेदादि सर्वशास्त्रों के मर्म को जानने वाले महर्षि श्रीवाल्मीकि श्रीव्यास प्रभृतियों ने हम दोनों को सर्वस्वरूप के रूप में सर्वत्र वर्णन किया है ॥ २८ ॥

**जगद्देहश्च सर्वज्ञो विभूरामः सदैव हि ।**
**जगद्देहा तथैवाहं सर्वज्ञा विभूतां गता ॥ २६ ॥**
**ऐश्वर्येण सदा रामो मादृशश्चास्ति मारुते ! ।**
**माधुर्येपि सदा रामो मत्सादृश्यं जहाति न ॥ ३० ॥**

मारुति ! ***'जगत्सर्वं शरीरं ते'*** इस महर्षि वचनानुसार जैसे श्रीरामचन्द्रजी जगत शरीर वाले हैं सदा एक रूप रहने वाले हैं विभू हैं और सर्वज्ञ हैं, उसी प्रकार मैं भी जगत् शरीर वाली सदा एक रूप से रहने वाली सर्वज्ञ तथा सर्वव्यापक हूं और विभू तथा सर्वज्ञ हूं ॥ २६ ॥

हे मरुतनन्दन ! श्रीरामचन्द्रजी ऐश्वर्य में सर्वदा मेरे जैसे ही हैं और माधुर्य में भी सदा मेरे जैसे ही हैं अतः दोनों में हम दोनों तुल्य हैं कुछ भी भेद नहीं हैं ॥ ३० ॥

**कोटि जन्मार्जितं पुण्यं ध्रुवं नश्यति स्तस्य हि ।**
**अज्ञत्वेनावयोर्निन्दा यः करोति नराधमः ॥ ३१ ॥**
**कुरुते त्वधमो मूढ़ो भेदबुद्धिं य आवयोः ।**
**यावच्चन्द्ररवी तस्य तावद्धि निरये स्थितिः ॥ ३२ ॥**

हनुमन् ! जो नराधम अज्ञानतया भी हम दोनों की निन्दा करता है उसका कोटि

जन्म से अर्जित पुण्य अवश्य ही नष्ट हो जाता है तथा असद्गति भी हो जाती है ॥ ३१ ॥

मारुति ! जो अधम व्यक्ति हम दोनों में ये दो अलग-अलग हैं, इस प्रकार भेदबुद्धिरखता है उस मूढ़ व्यक्ति की जब तक चन्द्रमा और सूर्य की स्थिति संसार में रहेगी तब तक नरक में स्थिति होगी अर्थात् श्रीसीतारामजी में भेद मानने वाले मनुष्य तब तक नरक में रहेगा जब तक चन्द्र और सूर्य संसार में रहेंगे ॥ ३२ ॥

**ततोदां मम नाथस्य मंत्रराजं षडक्षरम् ।**
**शिष्यस्य ते प्रियं कर्त्तुं गच्छ वत्स ! प्रदेहि तम् ॥ ३३ ॥**
**मातर्धन्यासि इत्येवं प्रणम्य प्राह मारुतिः ।**
**उपदिष्टं यतः स्वस्याः स्वरूपं राघवस्य च ॥ ३४ ॥**

वत्स ! पूर्व वर्णित प्रकार से शास्त्र मर्यादा तथा गूढ़ रहस्य है इस लिए मैंने मेरे प्रिय शिष्य तुम्हारा कल्याण करने के लिये मेरे आराध्यदेव सर्वेश्वर श्रीरामजी का षडक्षर मन्त्रराज श्रीराममहामन्त्र को ही तुम्हें दिया है । अतः हनुमन् ! जाओ ब्रह्माजी के कल्याण के लिये तुम भी यथाशास्त्र ब्रह्माजी को श्रीमन्त्रराज प्रदान कर उनका उद्धार करो ॥ ३३ ॥

श्रीवशिष्ठजी ने कहा है पराशरजी ! पूर्व में वर्णित प्रकार से श्रीसीताजी का उपदेश सुनने के बाद श्रीमारुतिजी ने श्रीसीताजी को सादरदण्डवत प्रणाम करके विनय पूर्णक कहा हे माताजी ! आप धन्य हैं, करुणामयी आपने मुझे भी धन्य बना दिया है क्योंकि अपना तथा सर्वेश्वर श्रीराघवजी का तात्विक स्वरूप का उपदेश देकर मेरी शंका को आपने दूर कर दिया है ॥ ३४ ॥

**ददौ च तारकं गत्वा मारुतिर्विधये मुदा ।**
**गृहीत्वा विधिना मन्त्रं गुरुभक्तोभवद्विधिः ॥ ३५ ॥**
**श्रीरामगुरुभक्तिभ्यां रामगुरुप्रसादतः ।**
**वैदिकार्थप्रकाशाद्धि ससर्ज पद्मजो जगत् ॥ ३६ ॥**

हे पराशर ! श्रीसीताजी की आज्ञा प्राप्त कर प्रसन्नता पूर्वक जाकर श्रीमारुतिजी ने श्रीब्रह्माजी को सविधि तारक श्रीराममहामन्त्र की दीक्षा दी और श्रीगुरू महत्व का उपदेश भी दिया, श्रीहनुमान जी से शास्त्रावधि के अनुसार श्रीराममन्त्रराज का ग्रहण कर अर्थात् दीक्षा शिक्षा प्राप्त करने के बाद विधि-विधाता गुरुभक्त हुये तब शक्ति स्फुरित होने से सृष्टि कर सके ॥ ३५ ॥

पराशर ! अब ब्रह्माजी में श्रीराम-परब्रह्म तथा गुरुभक्ति ये दोनों जागृत हुई अतः श्रीरामजी का प्रसाद प्रसन्नता अनुग्रह तथा गुरुजी मन्त्रराज की दीक्षा-शिक्षा प्रदाता श्रीहनुमानजी की प्रसन्नता से वेदार्थों का प्रकाश हुआ अनन्तर ब्रह्माजी ने परेश श्रीरामचन्द्रजी के आज्ञानुसार यथापूर्व जगत की सृष्टि की अर्थात् जीवों के पूर्वभवोपार्जित कर्मानुसार जगत् की रचना की ॥ ३६ ॥

**हृष्टश्च भगवान् रामः श्रीसीता मारुतिस्तथा ।**
**ववन्दे श्रद्धया ब्रह्मा सद्गुरुं स्वस्य मारुतिम् ॥ ३७ ॥**
**सर्वेशः सर्वशक्तिश्च श्रीरामः सर्वकारणम् ।**
**तस्य मन्त्रप्रदं वन्दे मारूतिं मतिवारिधिम् ॥ ३८ ॥**

सृष्टि कार्य में समर्थ हो कर यथानुरूप सृष्टि करते ब्रह्माजी को देखकर भगवान् श्रीरामचन्द्रजी भगवती श्रीसीताजी तथा मारुति जी अति प्रसन्न हुये । ब्रह्माजी ने अपने सद्गुरुदेव श्रीहनुमानजी तथा श्रीसीतारामजी की पूर्ण श्रद्धा के साथ

वन्दना की ॥ ३७ ॥

श्रीब्रह्माजी कहते हैं श्री रामचन्द्रजी चराचर सभी के ईश हैं सर्वशक्ति सम्पन्न हैं और सभी के कारण हैं ऐसे जगन्नियन्ता श्रीरामजी के तारक षडक्षर महामन्त्र को मुझे देने वाले बुद्धि के समुद्र मरुतनन्दन श्रीहनुमानजी की मैं सादर वन्दना करता हूं ॥ ३८ ॥

**श्रीरामब्रह्मनिष्ठं च ब्रह्मचर्यपरायणम् ।**
**सीताहर्षप्रदं वन्दे मारुतिं मतिवारिधिम् ॥ ३६ ॥**
**श्रीमद्रामप्रियायाः श्रीसीतायाः शिष्यतां गतम् ।**
**सीतारामप्रियं वन्दे मारुतिं मतिवारिधिम् ॥ ४० ॥**

परब्रह्म श्रीरामजी में अनन्य निष्ठा रखने वाले तथा ब्रह्मचर्य व्रत में परायण या वेद तत्त्व का उपदेश करने में सर्वदा संलग्न सर्वेश्वरी श्रीसीताजी श्रीरामजी का सन्देश सुनाकर अपार हर्ष प्रदान करने वाले अतुलित बल ऐश्वर्य तथा शौर्यादि गुण सम्पन्न बुद्धि के महासमुद्र श्रीमारुतिजी को सादर दण्डवत प्रणाम करता हूं ॥ ३६ ॥

षडैश्वर्य श्रीसम्पन्न श्रीरामजी की प्रिया श्रीसीताजी का शिष्यत्व स्वीकार कर अर्थात् श्रीसीताजी से श्रीरामषडक्षर मन्त्र प्राप्त कर मुझे उस महामन्त्र को प्रदान करने वाले श्रीसीतारामजी के अति प्रिय, बुद्धिनिधान श्रीमारुतिजी की मैं सदावन्दना करता हूं ॥ ४० ॥

**भवाब्धितारकं सीतारामभक्त्याश्रितं जनम् ।**
**नित्यमुक्तमहं वन्दे मारुतिं मतिवारिधिम् ॥ ४१ ॥**

**दोषहीनं गुणाम्भोधिं दिव्यदेहं मनोजवम्।**
**वेदतत्त्वविदं वन्दे मारुतिं मतिवारिधिम् ॥ ४२ ॥**

शरण में आये हुए जनों को श्रीसीतारामजी की भक्ति के द्वारा भवसागर से पार उतारने वाले नित्यमुक्त, बुद्धि के समुद्र श्रीहनुमानजी की मैं वन्दना करता हूं ॥ ४१ ॥

सभी प्रकार के दोषों से रहित और सम्पूर्ण गुणों के समुद्र तथा दिव्य शरीर वाले और मन की गति के समान वेग वाले तथा वेद तत्त्व को जानने वाले मति के वारिधि श्रीमारुतिजी की मैं वन्दना करता हूं ॥ ४२ ॥

**प्रणम्यं पूजनीयं च स्तवनीयं बलाम्बुधिम्।**
**शरण्यं सद्गुरु वन्दे मारुतिं मतिवारिधिम् ॥ ४३ ॥**
**ऋद्धिसिद्धिप्रदं चाथ भक्तानां शत्रुनाशकम्।**
**आधिव्याधिहरं वन्दे मारुतिं मतिवारिधिम् ॥ ४४ ॥**

सदा प्रणाम करने योग्य तथा नित्य पूजनीय और स्तवनीय प्रार्थना करने योग्य और बल के सागर, शरण में आये जनों का संरक्षण करने वाले सद्गुरुदेव, बुद्धिनिधान श्रीमारुतिजी की मैं सादर वन्दना करता हूं ॥ ४३ ॥

शरणापन्न जनों को ऋद्धि तथा सिद्धि को प्रदान करने वाले और भक्तजनों के शत्रुओं का नाश करने वाले तथा आधि-व्याधि और उपाधि का हरण करने वाले बुद्धि के सागर श्रीमारुति की मैं आराधना करता हूं ॥ ४४ ॥

**सर्वज्ञं रामभक्तं च दयाब्धिं ज्ञानभक्तिदम्।**
**देवदेवं गुरुं वन्दे मारुतिं मतिवारिधिम् ॥ ४५ ॥**
**गुरावात्यन्तिकीं भक्तिं ब्राह्मणः संविलोक्य हि।**
**रामः सीता हनूमांश्च परं हर्षमवाप्नुवन्॥ ४६ ॥**

शरणापन्न जीवों को ज्ञान तथा भक्ति का दान करने वाले दया के समुद्र और सर्वज्ञ तथा श्रीरामजी के परमभक्त देवताओं के भी देवता मतिवारिधि श्रीगुरुदेव मारुतिजी की वन्दना करता हूं॥ ४५ ॥

श्रीवशिष्ठजी कहते हैं हे पराशर ! श्रीब्रह्माजी की श्रीगुरुदेव विषयक आत्यन्तिक भक्ति को देखकर श्रीरामजी श्रीसीता जी तथा श्रीहनुमानजी ने परम हर्ष का अनुभव किया ॥ ४६ ॥

**तदेवं ब्रह्मणो रामाज्जगन्माता हि जानकी।**
**लब्ध्वा श्रीराममन्त्रं च प्रददौ श्रीहनूमते॥ ४७ ॥**
**नित्यमुक्तो हनुमांस्तं ददौ चतुर्मुखाय हि।**
**जगत्कर्त्तुस्ततश्चाहमप्राप्नवंश्च तारकम्॥ ४८ ॥**

हे पराशरजी ! पूर्वोक्त प्रकार से जगन्माता श्रीजानकीजी ने परब्रह्म श्रीरामजी से षडक्षर श्रीरामतारकमहामन्त्र को प्राप्त कर श्रीहनुमानजी को प्रदान किया ॥ ४७ ॥

पराशर ! जिस तारक मन्त्रराज को सविधि श्रीहनुमानजी ने माता श्रीजानकीजी से प्राप्त किया था उसी को नित्यमुक्त श्री हनुमानजी ने चतुर्मुख ब्रह्माजी को

सविधि प्रदान किया उन जगत्कर्ता ब्रह्माजी से इसी तारकमन्त्रराज को मैंने शास्त्रविधानानुसार प्राप्त किया है ॥ ४८ ॥

**मत्तः शक्तिकुमारस्त्वं विधिना लब्धवांश्चतम् ।**
**प्रोक्ता पराशरैषा ते राममन्त्रपरम्परा ॥ ४६ ॥**
**पराशर गुरोः श्रुत्वा मन्त्रराज परम्पराम् ।**
**परया श्रद्धया युक्तश्चानमत्तामनुत्तमाम् ॥ ५० ॥**

जिस श्रीराममन्त्रराज को मैंने श्रीब्रह्माजी से प्राप्त किया उसी को मुझसे शक्ति के पुत्र तुमने शास्त्रीय विधान से प्राप्त किया है । हे पराशर ! जो तुमने श्रीराममन्त्रराज परम्परा के विषय में मुझसे पूछा था उस परम्परा को मैंने तुम्हें यथापूर्व बतला दिया ॥ ४६ ॥

अपने गुरुदेव श्रीवशिष्ठजी से श्रीमन्त्रराज की परम्परा को सुनकर अत्यन्त उत्तम उस श्री सम्प्रदाय परम्परा तथा श्रीगुरूदेवजी को परम श्रद्धा के साथ श्रीपराशरजी ने नमन किया ॥ ५० ॥